''वक्रतुन्डैकमहाकार्य सूर्यकोटि समप्रभ
अविघ्नं कुरु में देव सर्वकार्येषु सवर्दा''

ऋग्वेद की प्रथम ऋचा में विर्णित है :–

'' प्रकृति ने समिष्ट रूप से जब प्रथम स्पन्दन किया तो अभिव्यजना हुई सृष्टि बीज ॐ की ''

पश्चात शिव – शक्ति का सृष्टि सृजन के लिये ताण्डव करना और हम असंरव्य महाप्राणों की उत्पत्ति स्त्री – पुरूष के रूप में एवम् व्युत्पति आदि बीज ह्रीं की।

तत्पश्चात सृजक ब्रम्हा जी के हर्षोल्लासित हृदय ने सृजन किया कि क्यों न सम्पूर्ण सृष्टि रचना को ऐश्वर्य और सौन्दर्य की समग्रता से परिपूर्ण किया जाये।

जब जब पृथ्वी पर चन्द्र किरणें उदित हो रही थी सूर्योदय तक श्री बीज का निष्पादन और उसी समय पोषण – प्रदाता कर्ममय विष्णु ने अपने पुरूषार्थ से समुन्द्र मन्थन कर समूची पृथ्वी को श्री–मयी कर दिया ताकि मनुष्य जो देव शक्तियों का अक्षम भण्डार है, परमपिता ब्रम्हा जी के सृजन को अपने पराक्रम द्वारा और विस्तारित कर सके।

श्री , श्री माने समृद्धि, और समृद्धि के अर्थ है जन्म से मृत्यु तक जितने भी कार्य या संस्कार मनुष्य करता है उन सबको करने के लिए पदार्थ की आवश्यकता होती है, यह तमाम् पदाथश्री है, यहां तक कि मनुष्य शरीर भी पदार्थ से ही अर्थात पंच ततवों से (अग्नि, जल, वायु, पृथ्वी, आकाश) ही निर्मित है। अर्थात मनुष्य देह भी अपने आप में श्री हैं।

तन – मन – धन–दिमाग आत्मा की शुभता की परिपूर्णता अर्थात अन, धन, नौकर, पराक्रम, वाहन, ऐश्वर्य, कीर्ति, वैभव से युक्तता एवम् त्रृण, रोग, दारिद्रय, अपव्यय, भय, शोक, मन–संताप से मुक्तता ही श्री हैं।

उदाहरण :–

किसी व्यक्ति के पास धन–धान्य की अधिकता हो किन्तु उसे भोगने के लिये स्वस्थ शरीर न हो तो वह श्री विहीन है, या फिर स्वस्थ शरीर भी है किन्तु मन में संताप – क्लेश है या जीवन में अपयश, अकीर्ति, अशक्ति, इत्यादि है वह श्री का सही अर्थो में वरण नही कर सकता है।

वैदिक युग भारतवर्ष का स्वर्णिम काल कहलाता है और भारत स्वर्ण चिड़िया विदेशी आक्रमणों के पहले तक। शास्त्रों में उल्लेखित है कि भारत के प्रत्येक प्राचीन मन्दिर के भू–गर्भ में श्री यन्त्र उत्कीर्ण होता था तथा उसके ऊपर प्रकट मूर्ति स्थापन होता था।

इससे सम्बन्धित अनेक रोचक संस्मरण वर्णित है। प्रचलित है कि सौराष्ट्र के प्रसिद्ध सोमनाथ मन्दिर के गर्भ–गृह में स्वर्ण शिलाओं पर श्री यन्त्र प्रतिस्थापित थे, जिनकी गुप्त रूप से श्री विद्या के उपासको द्वारा नित्य पंचोपचार – अर्चना की जाती थी। यही कारण था कि वहां अतुल सम्पति की नित्य वर्षा होती थी। अरबो – खरबो के रत्न तो केवल मन्दिर के स्तम्भों में ही जड़ित थे।

इसकी सम्पन्नता व प्रशंसा से आकृष्ट होकर महमूद गजनबी ने सोमनाथ मन्दिर पर आक्रमण किया और असफल रहा, पुनः आक्रमण किया असफल रहा। इस प्रकार 16 बार आक्रमण किया और हर बार उसे विफलता का मुहं देखना पड़ा क्योंकि मन्दिर के गर्भ में उत्कीर्ण श्री यन्त्र सम्पदा की रक्षा करता था, किन्तु 16वी बार किस भारतीय मनस्वी ने रहस्य उजागर किया कि यदि मन्दिर में प्रतिष्ठित श्री गर्भ खण्डित कर दिया जाये तो वह भारतवर्ष की सम्पूर्ण सम्पदा को अपने नियन्त्रण में कर सकता है और ऐसा ही हुआ। उसके बाद तो सर्व विदित है ही कि विदेशी आक्रमणों के साथ – साथ देश श्री विहीन होता चला गया।

अब कुछ श्री यज्ञ के बारे में –

यजुर्वेद जो कि यज्ञो की विद्या को वर्णित करता है एवम् आधुनिक विज्ञान का भी यही मत है कि सृष्टि में पदार्थ की न तो व्युत्पति होती है और न ही विमिष्टि अर्थात् पदार्थ न तो पैदा किया जा सकता है और न ही नष्ट, केवल इसके आकार, स्वरूप, अनुपात को परिवर्तन एवं सर्म्वहित किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त द्वितीय तथ्य जो कि प्राचीन मनीषी कहते हैं। शब्द न केवल अभिव्यक्ति का सबसे सशक्त माध्यम है बल्कि उसकी स्थिति आकाश के भी परे है, इसलिये उन्होंने शब्द को ब्रम्ह माना, इसी प्रकार आधुनिक विज्ञान का भी मानना है कि जो कुछ भी शब्द हम कहते या सुनते हैं वह ईथर कणों की माध्यम से आकाश में ही विचरत होता रहता है अर्थात् शब्द की स्थिति अक्षुण्ण है माने शब्द कभी नष्ट नही होता।

मनुष्य अपनी आभीष्ट प्राप्ति के लिये (इच्छित वस्तु को पाने हेतु) तीन प्रकार के प्रयास करता है:–
कायिक, वाचिक, मानसिक और तीन ही प्रकार के साधनों का अवलम्बन (सहायता) भी लेता है: दैहिक, भौतिक, दैविक।

दैविक साधन का आशय मनुष्य द्वारा किये गये शारीरिक प्रयत्नों से है। भौतिक साधनों के अन्तगर्त हम दृश्य जगत के स्थूल पदार्थो को रखते हैं (उपकरण) और ये दोनो माध्यम जब असफल हो जाते हैं तो व्यक्ति का झुकाव दैविक माध्यम की ओर जाता है या फिर जो व्यक्ति असाधरण शक्तियों से जागृत होता है वह अपने भैतिक जगत को दैविक माध्यम से परिपूर्ण करता है।

यज्ञ यही दैविक माध्यम है जिसमें मनुष्य अपने इच्छित वस्तु को लयबद्ध उच्चारित मन्त्रो से आवहान कर आकाश में प्रतिष्ठित शब्दों से ऊर्जा के माध्यम द्वारा केन्द्रीबूत कर उस अनुपात को प्राप्त करता हैं जिसके लिये उसने संकल्पबद्ध होकर यज्ञ – प्रक्रिया अपनायी थी। यज्ञ विद्या में पांच विज्ञान एक साथ कार्य करते हैं। ये हैं :– ध्वनि (Sound), प्रकाश (Light), गति का विज्ञान (Science of Pace or vibration), ऊर्जा (Energy), अनुपात या परिणाम (Proportion & combination)

1. ध्वनि का विज्ञान (Science of Sound):
मन्त्रों में वर्ण व्यवस्था का संयोजन या बनावट इस प्रकार होती है जब उन वर्ण समूहों को लयबद्ध ध्वनि द्वारा उच्चारित किया जाता है तो इच्छित वस्तु या कामना जिसके कि लिये हम यज्ञ प्रक्रिया करते हैं ऊर्जा के माध्यम से एकत्रित होना शुरू होता है।

2. प्रकाश का विज्ञान (Science of Light)
उस वस्तु या आभीष्ट पर ध्यान (focus or concentrate) केन्द्रित करना जो कि हमको इस प्रकृति या ब्रम्हाण्ड से चाहिये।

3. गति का विज्ञान (Pace or Vibration Science)
जैसा कि हम सब जानते है कि ब्रम्हाण्ड की सभी वस्तुओं पदार्थ या शब्दों को एक जगह से दूसरी व्यवस्था में परिवर्तन हेतु गति की आवश्यकता होती है या शब्द तरंगो के माध्यम से संचारित होते हे।

4. ऊर्जा (Science of Energy)
ऊर्जा का विज्ञान वह माध्यम है जो कि आकाश में स्थापित शब्दों में से ऊर्जा को संग्रहित कर उस इच्छित अनुपात को संगठित या एकत्रित कर देता है।

5. अनुपात का विज्ञान (Proportion Combination)

यह परिणाम है उस संकल्प या इच्छा का जिसके लिये हमने सम्पूर्ण यज्ञ प्रक्रिया का आयोजन किया जैसा कि हम पूर्व में उल्लेख कर चुके हैं समस्त सृष्टि श्रीमयी है अर्थात् जीवन के पोषण हेतु जो भी पदार्थ या वस्तु की आवश्यकता होती है वह श्री है व उससे सम्बन्धित सभी संकल्प भी श्री हैं।

श्री यंत्र की जानकारी:

श्री विद्या शताक्षरी परमविद्या के नाम से जानी जाती है। इसके मूल मन्त्र में केवल सौ अक्षर या वर्ण होते है सारी सृष्टि का विकास व विलयक्रम श्री यन्त्र में बताया गया है। मनुष्य देह का माप ९६ अंगुल प्रमाण होता है अतएव श्री चक्र का माप ९६ इकाईयों पर रखा जाता है। मध्य का बिन्दु या बीज शक्तत्यात्मक या प्राण (Energy) है। प्रथम केन्द्रीय त्रिकोणों में सर्वसिद्धिप्रत शम्भु का स्थान माने शिव अर्थात् (आकार या shape) माना गया है। अष्टकोण या अष्टवसु अर्थात् पांच तत्व तथा मन, बुद्धि, अहंकार के स्थान हैं। अर्न्तबहि दश–दश त्रिकोण दश दिशाओं दश प्राणों के प्रतीक हैं। षोडश दल चन्द्रमा की विशुद्ध १६ कलाएँ हैं तथा आठ दलो में १६ कलाओं का समावेश भी दर्शाया गया है। इसके बाहर की तीन भूपूर रेखा त्रलौक्य वशीभूत (प्रभाववृद्धि)के साधन हैं और इसके चार मुख्य द्वार चारों मुख्य दिशाओं से रिद्धि – सिद्धि के प्रवेश उपकरण हैं। यह श्री यन्त्र आकाश में विचरण करने वाली समृद्धिशाली किरणों के ऐश्वर्यदाता तथा धनात्मक इलैक्ट्रान्स को अपनी और आकर्षित कर वातावरण को श्रीमयी कर देता है अर्थात् समृद्धिशाली और ऐश्वर्यप्रदायी कर देता है।

जब सम्पूर्ण प्रकृति अपने सौन्दर्य एवं यौवन के चरमोत्कर्ष पर होती है अर्थात् चारों ओर रंग बिरंगे पुष्प पल्लवित हो अपनी मन्त्रमुग्ध छटा बिखेर रहे होते हैं देव – वृक्ष पारिजात अपने केसरी पुष्पों की वर्षा कर धरती को आच्छादित कर देता हैं, तब देव गणों का देवलोक से पृथ्वीलोक में प्रेमालाप के लिये आगमन होता है और आती है बसंत ऋतु। उस पर फाल्गुनमास और उसकी भी पूर्ण चन्डोदययुक्त पूर्णिमा तो क्यों न अपने जीवन को सौन्दर्य और श्री से परिपूर्ण होने के लिए हम सब साथ साथ श्री का आवहन करें और स्वस्थ शरीर शान्त चित्त एवम् वैभवयुक्त यशस्वी मंगलमय जीवन जियें।